

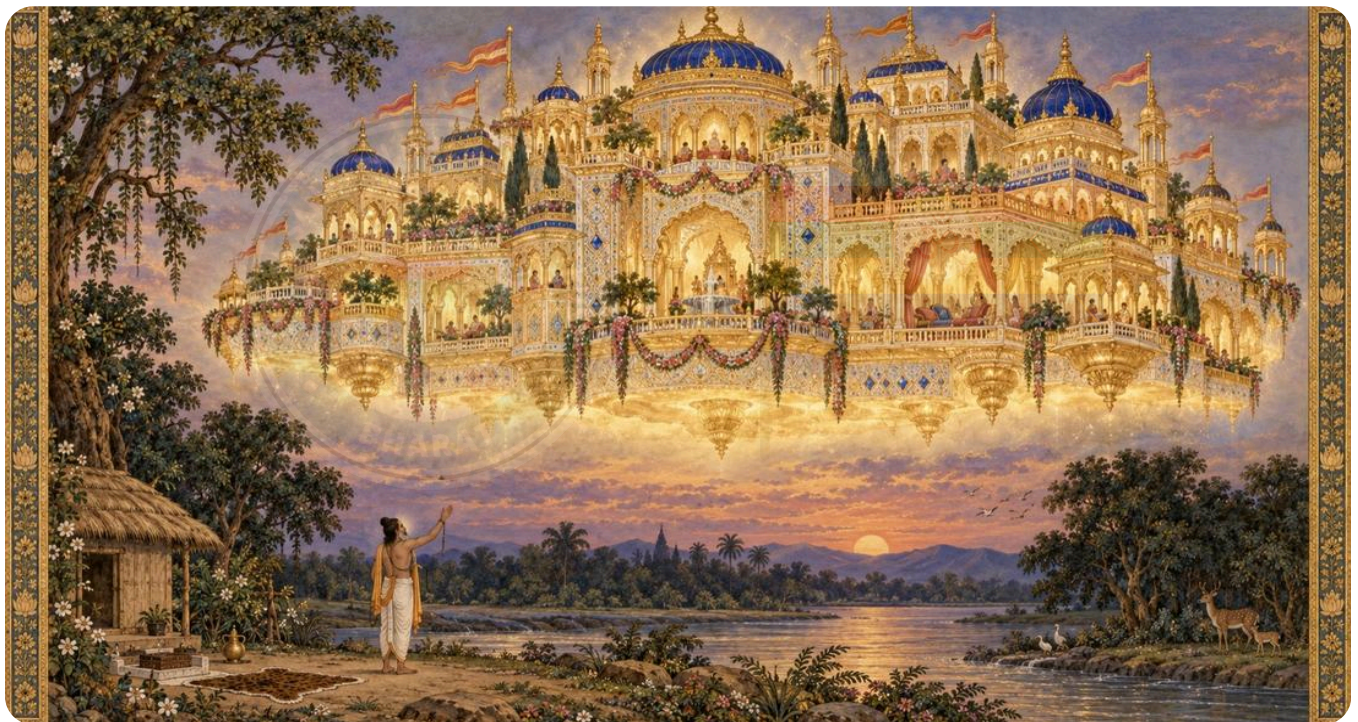
श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 23: कर्दम तथा देवहूति की प्रणय-क्रीड़ाएँ

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



मैत्रेय विदुर को अपनी कथा आगे बढ़ाते हैं: किस प्रकार ऋषि कर्दम, देवहूति की वर्षों की मौन, समर्पित सेवा से द्रवित होकर, उसकी चिरप्रतीक्षित इच्छा पूर्ण करते हैं — अपनी योगशक्ति से एक अद्भुत विमान की रचना करके, उसे एक पावन सरोवर में भेजकर जहाँ वह नवजात के समान रूपान्तरित तथा अलंकृत होती है, तथा उसे स्वर्ग के क्रीड़ा-उद्यानों में इस भक्तिमय दम्पति के लिए एक घण्टे से अधिक न प्रतीत होने वाले समय तक विचरण कराकर।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। द्वाविंश अध्याय मैत्रेय द्वारा स्वायम्भुव मनु की दीर्घ कथा को पूर्ण करने के साथ समाप्त हुआ था — प्रथम सम्राट्, जो सदैव श्रीहरि की कथाओं में लीन रहे, उन्हीं सुखों से अस्पृश्य रहकर जिन्हें रचने की सामर्थ्य उनमें स्वयं थी, जिनका सम्पूर्ण मन्वन्तर विकर्षण के बजाय भक्ति में व्यतीत हुआ। वह कथा पूर्ण करने के पश्चात्, मैत्रेय विदुर की ओर एक सरल आमन्त्रण के साथ मुड़े: “अब उनकी पुत्री की महिमा सुनो।” वह पुत्री देवहूति है, महान् ऋषि कर्दम की पत्नी, तथा त्रयोविंश अध्याय ठीक वहीं से आरम्भ होता है — अपने माता-पिता के अपने ही राज्य को लौट जाने के पश्चात् उसने अपने पति को जो वर्षों की शान्त, निष्ठावान् सेवा दी, तथा उस दीर्घ भक्ति ने अन्ततः उस ऋषि से क्या प्राप्त कराया जिसने उसे स्वीकार किया।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 23 (त्रयोविंश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: कर्दम तथा देवहूति की प्रणय-क्रीड़ाएँ
- मुख्य वक्ता: ऋषि मैत्रेय, विदुर के प्रति अपनी सतत कथा जारी रखते हुए — यह सम्पूर्ण कथा शुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को, तथा सूत गोस्वामी द्वारा ऋषि शौनक तथा नैमिषारण्य की सभा को सुनाई गई
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: सरस्वती नदी के तट पर कर्दम का आश्रम; कर्दम की योगशक्ति से रचित एक अद्भुत विमान; उसके भीतर स्थित एक पावन सरोवर; स्वर्ग के क्रीड़ा-उद्यान तथा मेरु पर्वत की ढलानें, जिनके मध्य से दम्पति यात्रा करते हैं
- मुख्य विषय: अपने पति के प्रति देवहूति की वर्षों की अटूट, समर्पित सेवा; कर्दम की कृतज्ञता तथा उसे एक दुर्लभ दृष्टि तथा वरदान का प्रदान; उसकी अकथित इच्छा पर एक भव्य विमान की रचना; एक पावन सरोवर में उसका शुद्धिकारक स्नान तथा उसका आश्चर्यजनक रूपान्तरण; उस दिव्य निवास में दम्पति का दीर्घ, आनन्दमय सहजीवन; उनकी नौ पुत्रियों का जन्म; तथा, विवाह के समय सहमति के अनुसार कर्दम के वन-गमन की तैयारी करते समय, देवहूति की करुण याचना कि वे पहले उसे वचनबद्ध पुत्र प्रदान करें
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 1-57
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

देवहूति की वर्षों की समर्पित सेवा

मैत्रेय आरम्भ कर्दम से नहीं, अपितु स्वयं देवहूति से करते हैं, तथा यह बल जान-बूझकर दिया गया है। जब उसके माता-पिता — स्वायम्भुव मनु तथा उनकी महारानी शतरूपा — विवाह के पश्चात् अपनी राजधानी को लौट गए, तो नवविवाहित राजकुमारी अपने पति के प्रति अखण्ड सजगता के जीवन में बस गई। मैत्रेय अपने लिए उपलब्ध सर्वोच्च उपमा का सहारा लेते हैं: देवहूति प्रतिदिन कर्दम की उसी प्रेमपूर्ण देखभाल से सेवा करती थी जो देवी पार्वती (भवानी) अपने ही पति भगवान् शिव (भव) की करती हैं। यह एक ऐसी उपमा है जो अन्यथा एक साधारण

वैवाहिक कर्तव्य प्रतीत होने वाली वस्तु को तत्काल उपासना के निकट कुछ में ऊपर उठा देती है — एक पत्नी जो अपने पति के मन तथा आवश्यकताओं को उसके कहने से पहले ही पढ़ सकती थी, तथा जिसने उन आवश्यकताओं को कर्तव्य से नहीं, अपितु सच्चे आनन्द से पूर्ण किया।

मैत्रेय उवाच ।

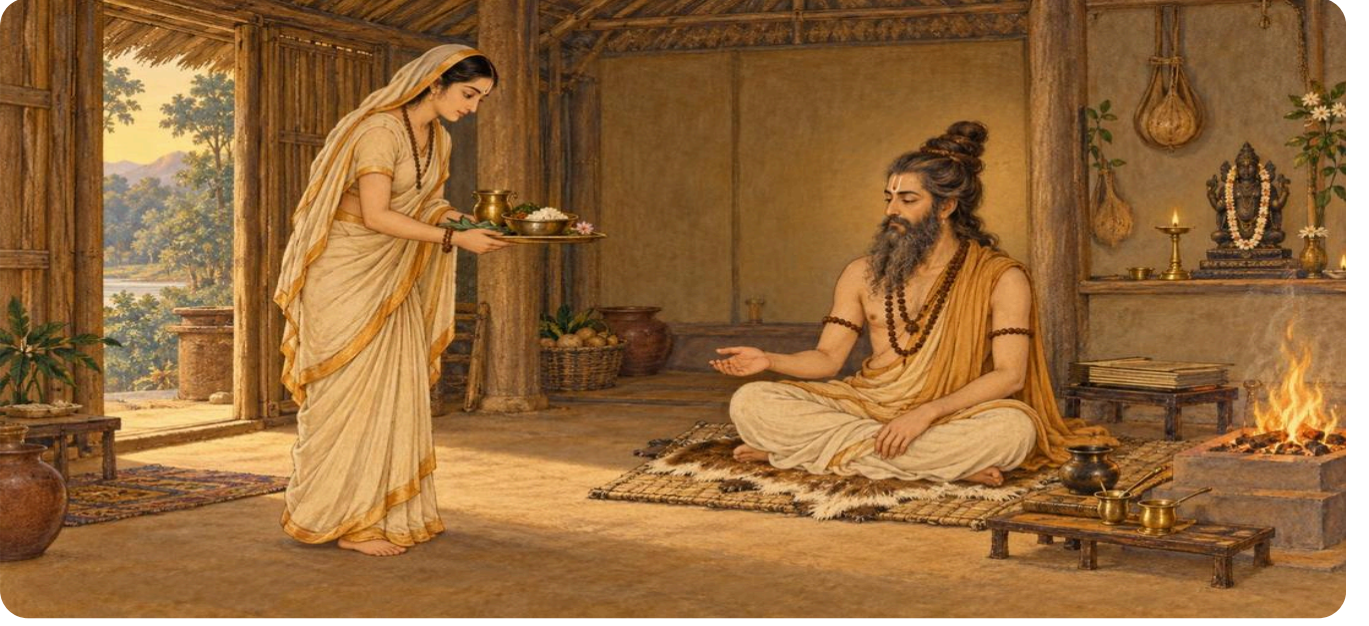
पितृभ्यां प्रस्थिते साध्वी पतिमिङ्गितकोविदा ।

नित्यं पर्यचरत्प्रीत्या भवानीव भवं प्रभुम् ॥ १ ॥

maitreya uvāca pitṛbhyāṁ prasthite sādhvī patim iṅgita-kovidā nityaṁ paryacarat prītyā bhavānīva bhavaṁ prabhum

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: जब उसके माता-पिता विदा हो चुके थे, तब सद्गुणी देवहूति, अपने पति के मन को पढ़ने में सदैव निपुण, प्रतिदिन उसी प्रेमपूर्ण आनन्द से उनकी सेवा करती थी जो भवानी (पार्वती) अपने ही पति भव (भगवान् शिव) की सेवा में दिखाती हैं। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 1)

इस आरम्भिक श्लोक के पश्चात् जो आता है वह उस भक्ति के पीछे के चरित्र का एक अधिक पूर्ण चित्र है। मैत्रेय विदुर को बताते हैं कि देवहूति ने वासना, कपट, द्वेष, लोभ, अभिमान तथा प्रत्येक निषिद्ध कर्म का त्याग कर दिया था; कि वह अपने पति की सेवा में सदैव सतर्क तथा सक्रिय रही; तथा कि उसने निष्ठा, मन तथा शरीर की पवित्रता, आदर, इन्द्रिय-नियन्त्रण, सच्ची सेवा, प्रेम तथा मधुर वाणी के माध्यम से उनका प्रसन्न-भाव अर्जित किया — एक ऐसा विवरण जो लगभग उन गुणों की सूची के समान पढ़ा जाता है जो सर्वप्रथम समर्पित साहचर्य को सम्भव बनाते हैं। वह अपने पति को प्रोविडेंस (नियति) से भी बढ़कर मानती थी, पूर्णतः समर्पित, उनसे साधारण से परे आशीर्वाद की अपेक्षा करते हुए। तथा उसकी भक्ति ने उसे वास्तव में कुछ मूल्य चुकाया: इतनी तीव्रता से दी गई वर्षों की ऐसी सेवा ने उसे दृश्यरूप से क्षीण तथा कृश कर दिया। यही — कोई अनुरोध नहीं, कोई शिकायत नहीं, अपितु उसकी भक्ति ने पहले ही जो मूल्य चुकाया था उसका मात्र दृश्यमान प्रमाण — कर्दम को करुणा से द्रवित कर देता है तथा उन्हें अन्ततः प्रेम से डगमगाते स्वर में उससे बोलने के लिए प्रेरित करता है।



अपने माता-पिता के अपने ही राज्य को प्रस्थान करने के पश्चात्, देवहूति अपने पति कर्दम की वर्षों की शान्त, समर्पित सेवा में बस जाती है, उन्हें उसी प्रेमपूर्ण देखभाल से सेवा प्रदान करते हुए जो पार्वती भगवान् शिव को देती हैं — इतनी पूर्ण भक्ति कि वह स्वयं उसके शरीर पर दृश्यरूप से भार डालती है (श्लोक 1-5)।

कर्दम की कृतज्ञता तथा दृष्टि का वरदान

अपनी पत्नी में जो कुछ वे देखते हैं उसके प्रति कर्दम की प्रतिक्रिया सबसे पहले एक स्वीकृति है। वे उससे स्पष्ट कहते हैं कि वे प्रसन्न हैं — कि उसकी निष्ठावान् सेवा तथा परम भक्ति ने उनकी सच्ची कृतज्ञता अर्जित की है, तथा कि उसने अपने ही शरीर को, जो प्रत्येक जीव को प्रिय होता है, बिना किसी अनिच्छा के पूर्णतः उनकी सेवा में व्यय कर दिया है। यह ध्यान देने योग्य है कि ऋषि इसे किस प्रकार प्रस्तुत करते हैं: विवाह के कारण उन पर बकाया किसी वस्तु के रूप में नहीं, अपितु स्वतन्त्र रूप से तथा बार-बार दिए गए एक उपहार के रूप में, जिसे वे अब चुकाने का विचार रखते हैं।

कर्दम उवाच ।

तुष्टोऽहमद्य तव मानवि मानदायाः शुश्रूषया परमया परया च भक्त्या ।

यो देहिनामयमतीव सुहृत्स देहो नावेक्षितः समुचितः क्षपितुं मदर्थे ॥ ६ ॥

kardama uvāca tuṣṭo 'ham adya tava mānavi mānadāyāḥ śuśrūṣayā paramayā parayā ca bhaktyā yo dehinām ayam atīva suhṛt sa deho nāvekṣitaḥ samucitaḥ kṣapitum mad-arthe

अर्थ: कर्दम ने कहा: हे मनु-पुत्री, हे मानदायिनी, मैं आज तुम्हारी अत्युत्तम सेवा तथा परम भक्ति से प्रसन्न हूँ — क्योंकि तुमने मेरे लिए इस अपने ही शरीर को, जो प्रत्येक देहधारी का परम मित्र है, बिना संकोच के क्षीण कर दिया। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 6)

कर्दम जो उपहार तब अर्पित करते हैं वह अपने स्वरूप में उल्लेखनीय है: तत्काल वह पुत्र नहीं जिसकी उसने दीर्घकाल से आशा की है, अपितु अलौकिक दृष्टि — स्वयं देखने की क्षमता कि उनकी अपनी कठोर तपस्या, गहन ध्यान, उपासना तथा कर्तव्य के प्रति अटूट भक्ति के माध्यम से उन्होंने कौन-से दिव्य आशीर्वाद सुरक्षित किए हैं। ये आशीर्वाद, वे उसे बताते हैं, भय तथा शोक से पूर्णतः मुक्त हैं, तथा ऐसे आशीर्वाद जिन पर उसकी अपनी निष्ठावान् सेवा ने अब उसे उचित भाग का अधिकार दिला दिया है। वे एक और, लगभग दार्शनिक टिप्पणी जोड़ते हैं: स्वर्ग के सुखों

का ही क्या मूल्य है, वे पूछते हैं, जब स्वर्गीय लोकों की आकांक्षाएँ भी सर्वशक्तिमान भगवान् की भाँहों के मात्र संकुचन से विफल हो सकती हैं? देवहूति, वे उसे बताते हैं, अपनी निष्ठा के माध्यम से अपना वास्तविक लक्ष्य पहले ही प्राप्त कर चुकी है; अब वह कर्तव्य-भक्ति से अर्जित सुखों का भोग कर सकती है, ऐसे सुख जिन्हें साधारण मनुष्य, राजसी गरिमा की मिथ्या धारणाओं में फँसे हुए, कठिनाई से भी प्राप्त नहीं कर पाते।

यह सुनकर, देवहूति की राहत तत्काल तथा दृश्यमान है — वह समझती है, सम्भवतः पहली बार पूर्ण स्पष्टता के साथ, कि उसका पति योगशक्ति तथा प्रत्येक प्रकार की उपासना का पूर्ण स्वामी है। मैत्रेय उसके मुखमण्डल में परिवर्तन को नोट करते हैं: उसका मुख एक मुस्कान तथा संकोचपूर्ण दृष्टियों से उज्ज्वल हो उठता है, तथा जब वह बोलती है, तो उसका स्वर संकोच तथा प्रेम के मिश्रण से अवरुद्ध होता है।



देवहूति के वर्षों की भक्ति के दृश्यमान मूल्य से द्रवित होकर, कर्दम अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हैं तथा उसे अपनी ही तपस्या तथा उपासना से सुरक्षित आशीर्वादों की अलौकिक दृष्टि प्रदान करते हैं — एक प्रस्ताव जो उसे शान्त आनन्द से उज्ज्वल छोड़ देता है (श्लोक 6-9)।

देवहूति का अनुरोध

जो देवहूति माँगती है, जब उसे अपना स्वर मिलता है, वह अस्पष्ट अथवा सजावटी नहीं है — यह उस वचन की पूर्ति है जो उसके विवाह के समय, उसके अपने पिता की उपस्थिति में दिया गया था: कि कर्दम उसे अपने शरीर का स्पर्श, यदि केवल एक बार भी, प्रदान करेंगे, ताकि वह इतने पूज्य पति के माध्यम से सन्तान धारण कर सके। वह इसे उसी रूप में पुकारती है जो यह उस परम्परा में है जिसमें वह पत्नी-बढ़ी — किसी भी सद्गुणी पत्नी के लिए एक दुर्लभ वरदान — तथा अपने पति से व्यावहारिक रूप से, बिना किसी संकोच के, पूछती है कि इस विषय पर शास्त्र क्या तैयारियाँ बताते हैं, तथा इस प्रयोजन के लिए एक उपयुक्त निवास कहाँ पाया जा सकता है। उसका अनुरोध सर्वत्र भोग-विलास के रूप में नहीं, अपितु धर्म की पूर्ति के रूप में गढ़ा गया है: एक ऐसे पति के माध्यम से सन्तति सुरक्षित करना जिसे वह प्रोविडेंस से भी बढ़कर आदर देती है।

विमान की रचना होती है

अपनी पत्नी के अनुरोध का कर्दम का उत्तर हाथ से बना घर नहीं, अपितु योगशक्ति से आवाहित एक अद्भुत वस्तु है। मैत्रेय विदुर को, लगभग तटस्थ भाव से, बताते हैं कि ऋषि ने मात्र अपनी अद्भुत आध्यात्मिक सिद्धि का प्रयोग किया तथा तत्काल एक ऐसा विमान उत्पन्न किया जो जहाँ भी इच्छा हो वहाँ यात्रा कर सकता था।

मैत्रेय उवाच ।

प्रियायाः प्रियमन्विच्छन् कर्दमो योगमास्थितः ।

विमानं कामगं क्षत्तस्तर्ह्येवाविरचीकरत् ॥ १२ ॥

maitreya uvāca priyāyāḥ priyam anvicchan kardamo yogam āsthitaḥ vimānaṁ kāma-gaṁ kṣattas tarhy evāvīracīkarat

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: हे विदुर, अपनी प्रिया को प्रसन्न करने की इच्छा से, कर्दम ने अपनी योगशक्ति का सहारा लिया तथा तत्काल एक ऐसा विमान रच दिया जो जहाँ भी इच्छा हो वहाँ यात्रा कर सके। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 12)

आगे मैत्रेय जो वर्णन करते हैं वह एक निवास से कम तथा स्थापत्य में उतारे गए स्वर्ग की एक झलक से अधिक है: प्रत्येक प्रकार के रत्न से अलंकृत, बहुमूल्य पत्थरों के स्तम्भों वाली, तथा उपयोग से घटने के बजाय बढ़ने वाली सम्पदा से युक्त एक संरचना; अलौकिक सुविधा की वस्तुओं से सुसज्जित, प्रत्येक ऋतु में आरामदायक, प्रत्येक रंग के ध्वजों तथा तोरणों से सज्जित। इसे इतने सुगन्धित पुष्पों की मालाओं से अलंकृत किया गया था कि वे भ्रमरों की गुंजार खींच लेते थे, तथा महीन सन तथा रेशम की टेपेस्ट्रियों से लटकाया गया था। इसकी अनेक मंज़िलों में गद्दे, शय्याएँ, पंखे तथा आसन स्पष्ट देखभाल से व्यवस्थित थे; इसकी दीवारों पर सुन्दर उत्कीर्णन तथा कलाकृतियाँ थीं; इसका फर्श पन्ना तथा मूँगे से पटा हुआ था। मूँगे की देहरियों में हीरे के द्वार खड़े थे; नीलम के गुम्बदों ने स्वर्ण के मुकुट पहने थे; हीरे की दीवारों में जड़े माणिक्यों ने सम्पूर्ण संरचना को अपने दर्शक की ओर सजीव आँखों से देखता हुआ प्रतीत कराया; स्वर्णिम बन्दनवार तथा अद्भुत चंदोर्वों ने प्रभाव को पूर्ण किया। यहाँ तक कि पक्षियों का कलरव भी अलौकिक था — स्थापत्य में उकेरे या आवाहित हंस तथा कबूतर वास्तविक पक्षियों द्वारा जीवित साथी समझ लिए जाते थे जो उनका अभिवादन करने उड़ आते थे। विमान में क्रीड़ा-स्थल, विश्राम-कक्ष, तथा आन्तरिक तथा बाह्य आँगन थे, इतनी सजग सुविधा से व्यवस्थित कि कहा जाता है कि इसने स्वयं कर्दम को भी, जो इसके अपने रचयिता थे, चकित कर दिया।



अपनी योगशक्ति से, कर्दम तत्काल रत्नों, स्वर्ण तथा मणियों का एक अद्भुत विमान रचते हैं, उद्यानों तथा आँगनों सहित पूर्ण, जो जहाँ भी इच्छा हो वहाँ यात्रा कर सकता है —
एक ऐसा अद्भुत कार्य जो स्वयं इसे रचने वाले ऋषि को भी चकित करता है (श्लोक 12-21)।

देवहूति को पावन सरोवर भेजा जाता है

अपनी सम्पूर्ण भव्यता के बावजूद, यह विमान अकेले वह पूर्णतः सन्तुष्ट नहीं करता जो कर्दम अपनी पत्नी के हृदय में अनुभव करते हैं — समस्त प्राणियों के मन पढ़ पाने की अपनी क्षमता से, वे नोट करते हैं कि इतना भव्य घर भी उसे उतना प्रसन्न नहीं कर पाया है जितनी उन्होंने आशा की थी। अतः वे उसे कोमलता से पहले किसी अन्य वस्तु की ओर निर्देशित करते हैं: एक निकटवर्ती सरोवर, वे उसे बताते हैं, स्वयं भगवान् विष्णु द्वारा उसमें बहाए गए अश्रुओं से पवित्र किया गया है, तथा जो भी उसमें स्नान करता है उसकी किसी भी इच्छा को पूर्ण करने में सक्षम है।

कर्दम उवाच ।

निमज्ज्यास्मिन् हृदे भीरु विमानमिदमारुह ।

इदं शुक्लकृतं तीर्थमाशिषां यापकं नृणाम् ॥ २३ ॥

kardama uvāca nimajjyāsmiṇ hrade bhīru vimānam idam āruha idam śukla-kṛtaṁ tīrtham āśiṣāṁ yāpakam nṛṇām

अर्थ: कर्दम ने कहा: हे भीरु, इस पावन सरोवर में स्नान करो तथा फिर इस विमान पर आरोहण करो; क्योंकि यह सरोवर, स्वयं भगवान् विष्णु द्वारा पवित्र किया गया, उसके शरण लेने वाले सभी की इच्छाओं को पूर्ण करने में सक्षम है। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 23)



अपनी पत्नी के हृदय में अब भी असन्तुष्ट शान्त उत्कण्ठा को पढ़ते हुए, कर्दम कोमलता से देवहूति को स्वयं भगवान् विष्णु के अश्रुओं से पवित्र एक निकटवर्ती सरोवर की ओर निर्देशित करते हैं, उसे बताते हुए कि इसका पावन जल किसी भी सच्ची इच्छा को पूर्ण कर सकता है (श्लोक 22-23)।

देवहूति का स्नान तथा उसका दिव्य रूपान्तरण

आगे जो होता है उसे मैत्रेय मात्र एक स्नान के बजाय एक चमत्कार के रूप में प्रस्तुत करते हैं। देवहूति, अभी भी अपनी वर्षों की कठोर सेवा के बाह्य चिह्नों को धारण करते हुए — मलिन वस्त्र, जटाजूट, धूल तथा कठिनाई से धूमिल शरीर — अपने पति के वचन के समक्ष झुककर सरोवर में प्रवेश करती है, जिसका जल स्वयं पावन सरस्वती से पहचाना जाता है। सतह के नीचे वह एक सम्पूर्ण छिपा हुआ संसार खोजती है: पूर्ण यौवन में खिली, कमल के समान तेजस्वी तथा सुगन्धित, एक सहस्र कन्याओं से भरा एक घर, जो उसे देखते ही तत्काल उठ खड़ी होती हैं तथा जुड़ी हथेलियों से स्वयं को उसकी परिचारिकाओं के रूप में अर्पित करती हैं।

भागवत में इन परिचारिकाओं द्वारा देवहूति के लिए किया गया कार्य अपने आप में सजावट के बजाय शुद्धिकरण तथा पुनर्स्थापन का कार्य वर्णित किया गया है — अन्ततः उस कठिनाई के प्रत्येक चिह्न को हटाना जो उसकी भक्ति ने उसे दिया था। उसे स्नान कराया जाता है, अभ्यंजित किया जाता है, तथा नवीन वस्त्र पहनाए जाते हैं; उसे आभूषण, पोषक भोजन तथा तरोताज़ा करने वाले पेय दिए जाते हैं; तथा जब वह अन्ततः एक दर्पण में देखती है, तो वह एक ऐसी स्त्री देखती है जो पूर्णतः रूपान्तरित हो चुकी है — तपस्या के प्रत्येक चिह्न से मुक्त, अलंकृत, तथा तेजस्वी। भागवत कहता है कि उसका मूल सौन्दर्य उसे पूर्णतः लौटा दिया गया है: उसका मुखमण्डल चमकता है, उसके आभूषण चमकते हैं, तथा वह खड़ी होती है, मैत्रेय की सावधान कथा में, अब थकी हुई तपस्वी की पत्नी के रूप में नहीं अपितु किसी नवीनीकृत के रूप में। जिस क्षण वह अपने पति का स्मरण करती है, वह तथा उसकी सहस्र परिचारिकाएँ स्वयं को तत्काल वहीं पहुँचा हुआ पाती हैं जहाँ भी वे हैं — एक छोटा, शान्त प्रदर्शन कि उसने अभी-अभी जो चमत्कार देखा है वह उसी योगशक्ति से पूर्णतः एक है जिसने इसे रचा।



पावन सरोवर के भीतर, एक सहस्र दिव्य कन्याएँ देवहूति को ग्रहण करती हैं तथा उसे पुनर्स्थापित करती हैं — वर्षों की समर्पित तपस्या के पश्चात् शुद्ध, अलंकृत, तथा अपने मूल सौन्दर्य से तेजस्वी — इससे पहले कि वह स्वयं को एक ही विचार से अपने पति के पार्श्व में पहुँची हुई पाए (श्लोक 24-35)।

विमान पर आरोहण तथा स्वर्ग के उद्यानों में जीवन

कर्म, अपनी पत्नी को रूपान्तरित तथा अब उस थकी हुई आकृति के रूप में नहीं देखकर, कोमल स्नेह से भर जाते हैं तथा उसे विमान पर आरोहण में सहायता करते हैं, जो अब उसकी सहस्र दिव्य सहचरियों द्वारा परिचर्या की जाती है। मैत्रेय यहाँ स्वयं ऋषि के विषय में एक महत्वपूर्ण बात नोट करने में सावधान हैं: इस भव्यता के मध्य भी, यहाँ तक कि सजग विद्याधर कन्याओं तथा एक समर्पित, तेजस्वी पत्नी से घिरे होने पर भी, कर्म अपनी आन्तरिक निपुणता नहीं खोते — एक आत्म-नियन्त्रित योगी के रूप में उनकी महिमा पूर्णतः अक्षुण्ण रहती है। मैत्रेय जिस उपमा का सहारा लेते हैं वह सांसारिक के बजाय दिव्य है: उस विमान में कर्म, देवहूति को अपने पार्श्व में लिए, चन्द्रमा के समान प्रतीत होते हैं जो आकाश के अन्य नक्षत्रों के मध्य अपनी सहचरी तारा रोहिणी के साथ चमकता है — भोग-विलास के बजाय सामंजस्य का एक चित्र।

सिद्धों के समूहों द्वारा स्तुति किए जाते तथा उनकी परिचर कन्याओं द्वारा सेवा किए जाते हुए, दम्पति स्वयं मेरु पर्वत के क्रीड़ा-स्थलों में यात्रा करते हैं — वह पर्वत जो समस्त आठों दिशाओं के रक्षकों का क्रीड़ा-स्थल है — जहाँ शीतल, सुगन्धित समीर स्वर्गीय गंगा के स्वर्ग से अवतरण की ध्वनि लाती है। वे बारी-बारी से वैश्रम्भक, सुरसन, नन्दन, पुष्पभद्र तथा चैत्ररथ्य नामक प्रसिद्ध स्वर्गीय उद्यानों से होकर, तथा मानसरोवर के शान्त जल के ऊपर से गुज़रते हैं। इच्छानुसार उड़ सकने वाले विमान में आकाश में विचरण करते हुए, कहा जाता है कि कर्म गति की स्वतन्त्रता में स्वयं देवताओं को भी पीछे छोड़ देते हैं, क्योंकि देवता, मैत्रेय नोट करते हैं, अपने ही विशिष्ट क्षेत्रों तक सीमित रहते हैं। मैत्रेय अध्याय के इस भाग का समापन एक और विवरण के बजाय एक चिन्तन से करते हैं: वे विदुर से पूछते हैं, उन आत्म-संयत आत्माओं के लिए वास्तव में क्या प्राप्त करना कठिन है जिन्होंने भगवान् के चरणों में शरण ली है — वे चरण जिनसे गंगा जैसी पावन नदियाँ स्वयं प्रवाहित होती हैं, तथा जो सांसारिक जीवन के प्रत्येक शोक का अन्त करते हैं?



दिव्य कन्याओं द्वारा परिचर्या किए जाते तथा सिद्धों के समूहों द्वारा स्तुति किए जाते हुए, कर्दम तथा देवहूति अपने उड़ते हुए विमान में एक साथ स्वर्गीय उद्यानों तथा मेरु पर्वत की ढलानों के ऊपर से यात्रा करते हैं, ऋषि की आन्तरिक निपुणता इतनी भव्यता के मध्य भी अडिग रहती है (श्लोक 36-42)।

प्रत्यागमन, नौ रूप, तथा नौ पुत्रियों का जन्म

अन्ततः, अपनी पत्नी को व्यापक संसार के अद्भुत दृश्य दिखाने के पश्चात्, कर्दम विमान को अपने ही आश्रम में वापस लाते हैं। यहीं मैत्रेय दम्पति के दीर्घ साहचर्य की पराकाष्ठा का वर्णन करते हैं: देवहूति की अपनी गहन मिलन-इच्छा को पूर्ण करने की इच्छा से, ऋषि ने अपने एकल स्वरूप को नौ रूपों में विभाजित कर दिया, इस प्रकार दम्पति के लिए एक साथ बिताए वर्षों का जीवन एक ही घण्टे की शीघ्रता से बीत गया। कहा जाता है कि सौ शरद ऋतुएँ ऐसे बीत गई मानो वे मात्र एक क्षण हों, इतनी पूर्ण थी ऋषि की योगशक्ति के माध्यम से एक-दूसरे में उनकी लीनता।

मैत्रेय उवाच ।

विभज्य नवधात्मानं मानवीं सुरतोत्सुकाम् ।

रामां निरमयन् रेमे वर्षपूगान्मुहूर्तवत् ॥ ४४ ॥

maitreya uvāca vibhajya navadhātmānaṁ mānavīm suratotsukām rāmām niramayan reme varṣa-pūgān muhūrtavat

अर्थ: मैत्रेय ने कहा: मिलन के लिए अपनी पत्नी, मनु-पुत्री, की गहन उत्कण्ठा को पूर्ण करने के लिए अपने स्वरूप को नौ रूपों में विभाजित करके, ऋषि ने उसे प्रसन्न किया, तथा दम्पति के लिए बहुत वर्ष ऐसे बीत गए मानो वे मात्र एक घण्टा हों। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 44)

योगिक भक्ति के इस उल्लेखनीय कार्य के पश्चात् जो आता है वह इसका स्वाभाविक फल है: देवहूति को अपनी ही आत्मा के समान कोमलता से देखते हुए, तथा अपने रूप को नौ में विभाजित करके, कर्दम का उसके साथ मिलन उसी दिन फल लाया — नौ पुत्रियाँ, प्रत्येक अपने प्रत्येक अंग में मनोहर तथा लाल कमल के समान सुगन्धित, एक साथ जन्मीं। यह अध्याय इसे किसी तमाशे के बजाय उस विवाह की स्वाभाविक

पराकाष्ठा के रूप में मानता है जो अपने आरम्भ से ही पारस्परिक भक्ति, धैर्यपूर्ण सेवा, तथा मात्र सुख के बजाय प्रेम की सेवा में पवित्र शक्ति के प्रयोग पर निर्मित हुआ था।



अपनी योगशक्ति के माध्यम से अपनी पत्नी की दीर्घकालिक मिलन-इच्छा को पूर्ण करते हुए, देवहूति के प्रति कर्दम की भक्ति नौ पुत्रियों में फल लाती है, एक ही दिन एक साथ जन्मी, प्रत्येक लाल कमल के समान मनोहर तथा सुगन्धित (श्लोक 43-48)।

देवहूति की करुण याचना

अध्याय का अन्तिम भाग उत्सव से एक शान्त, पीड़ादायक शोक की ओर, काफी अकस्मात्, मुड़ता है। कर्दम, अपने विवाह के समय पहुँची हुई समझ के प्रति सच्चे, अब गृहस्थ-जीवन को त्यागकर एक संन्यासी के रूप में वन को प्रस्थान करने की तैयारी करते हैं। देवहूति, जो अब भी सबसे बढ़कर एक वस्तु के लिए तरसती है — एक पुत्र, वचनबद्ध किन्तु अभी तक अप्रदत्त — स्वयं को अपने शोक को छिपाने में असमर्थ पाती है। इस क्षण में मैत्रेय द्वारा उसका वर्णन कोमल तथा सटीक है: वह अपने पैर से, जिसके नाखून रत्नों के समान चमकते हैं, भूमि को खरोंचती है, उसका सिर नीचे झुका हुआ है, तथा यद्यपि उसके मुख पर मुस्कान है, वह ऐसे शब्दों में बोलती है जो एक दृश्यरूप से व्याकुल तथा पीड़ित हृदय द्वारा गढ़े गए हैं, अपने आँसुओं को उन्हें बनाते हुए भी दबाते हुए।

कर्दम के प्रति उसके शब्द उन सबको स्वीकार करते हैं जो वे उसे पहले ही दे चुके हैं — प्रत्येक वचन जो उन्होंने किया वह पूर्ण किया गया है — यहाँ तक कि जब वह एक वस्तु और माँगती है: भोग नहीं, अपितु भय से रक्षा, चूँकि उसने उनमें पूर्णतः शरण ली है। उसकी पुत्रियों को, वह एक माता की व्यावहारिक चिन्ता से नोट करती है, प्रत्येक के लिए एक उपयुक्त वर खोजने की आवश्यकता होगी; तथा वह स्वयं, उनके प्रस्थान के पश्चात्, उनकी अनुपस्थिति के शोक में उसे सान्त्वना देने के लिए किसी की आवश्यकता होगी। वह, बिना किसी संकोच की ईमानदारी से, उस समय पर चिन्तन करती है जो वह पहले ही परम आत्मा को भूलकर इन्द्रियों की वस्तुओं का भोग करने में व्यतीत कर चुकी है, यह स्वीकार करते हुए कि कर्दम के प्रति उसका प्रेम, चाहे कितना भी सच्चा हो, उनके दिव्य वैभव को पूर्णतः जाने बिना उत्पन्न हुआ था — तथा फिर भी वह माँगती है कि यही प्रेम, चाहे इसका मूल कितना भी अपूर्ण रहा हो, अब भी वह वस्तु बने जो उसे प्रत्येक भय से मुक्त करती है।

देवहूतिरुवाच ।

सङ्गो यः संसृतेर्हेतुरसत्सु विहितोऽधिया ।

स एव साधुषु कृतो निःसङ्गत्वाय कल्पते ॥ ५५ ॥

devahūtir uvāca saṅgo yaḥ saṁsṛter hetur asatsu vihito 'dhiyā sa eva sādhuṣu kṛto niḥsaṅgatvāya kalpate

अर्थ: देवहूति ने आगे कहा: वही आसक्ति का बन्धन जो अज्ञानवश अपवित्र वस्तुओं पर स्थिर होने पर आत्मा को जन्म-मृत्यु के चक्र में जकड़ देता है, वही, जब यही आसक्ति साधु-पुरुषों की ओर लगाई जाती है, तब प्रत्येक बन्धन से मुक्ति का साधन बन जाता है। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 55)

अपने ही विवाह के विषय में यह एक विस्मयकारी दावा है: जिस कारण से भी वह पहले-पहल कर्दम की ओर आकर्षित हुई थी, वही बन्धन, वह अब देखती है, पहले से ही उसे मुक्त करने का शान्त कार्य कर रहा था। अगले ही क्षण वह इस बात की ओर मुड़ती है कि ऐसे साहचर्य के अभाव का मूल्य वास्तव में क्या होता है।

नेह यत्कर्म धर्माय न विरागाय कल्पते ।

न तीर्थपदसेवायै जीवन्नपि मृतो हि सः ॥ ५६ ॥

neha yat karma dharmāya na virāgāya kalpate na tīrtha-pada-sevāyai jīvann api mṛto hi saḥ

अर्थ: जो कर्म व्यक्ति को धार्मिकता की ओर नहीं ले जाता, जो त्याग व्यक्ति को सच्चे वैराग्य की ओर नहीं ले जाता, तथा जो अनुसरण व्यक्ति को भगवान् के चरणों की सेवा की ओर नहीं ले जाता — ऐसी ही गतिविधि में बीता जीवन, वह कहती है, साँस के वेश में मृत्यु है। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 56)

इन दो श्लोकों के नीचे एक गहरी धारा प्रवाहित है जिसकी ओर यह अध्याय शान्तिपूर्वक निरन्तर आगे बढ़ रहा था। देवहूति मुक्ति की खोज में कर्दम के पास नहीं आई थी; उसके अपने ही कुछ क्षण पूर्व दिए गए विवरण के अनुसार, वह एक पति, एक गृहस्थी, तथा सन्तान की खोज में आई थी। फिर भी वह अब जो बिन्दु बना रही है वह ठीक यही है कि ऐसे साधारण कारणों से किया गया साहचर्य भी, अपने आप, मुक्ति में परिपक्व हो जाता है, ठीक उसी क्षण जब जिससे साहचर्य किया गया है वह स्वयं भगवान् के प्रति समर्पित हो। इस विवाह से पहले ही जन्मी नौ पुत्रियाँ देवहूति का परिवार पूर्णतः हैं; किन्तु जिस पुत्र की वह अभी माँग करने वाली है वह, समय आने पर, स्वयं भगवान् कपिल बनेगा — उसका अपना मुक्तिदाता तथा गुरु। कर्दम के प्रति उसकी आसक्ति, एक कारण से खोजी गई, पहले से ही उसे, अनदेखे रूप से, दूसरे की ओर ले जा रही थी (श्लोक 53-56)।

तथा वह अपने ही एक स्वीकारोक्ति के साथ समाप्त करती है जो अध्याय के अन्तिम मोड़ का सम्पूर्ण भार वहन करती है: वह कहती है, वह निश्चय ही भगवान् की माया से छली गई है, इसमें कि उसने अपने ही पति में, अन्तिम मुक्ति के दाता को प्राप्त करके भी, सांसारिक बन्धन से मुक्ति नहीं माँगी।

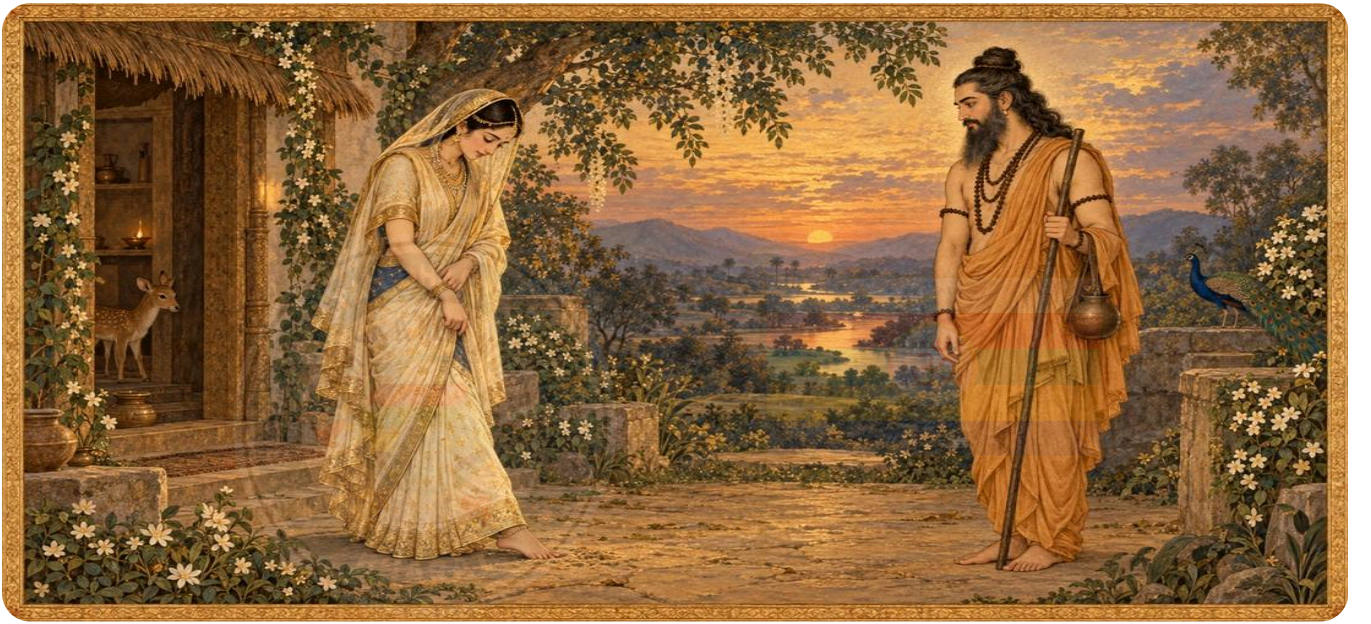
देवहूतिरुवाच ।

साहं भगवतो नूनं वञ्चिता मायया दृढम् ।

यत्त्वां विमुक्तिदं प्राप्य न मुमुक्षेय बन्धनात् ॥ ५७ ॥

devahūtir uvāca sāhaṁ bhagavato nūnaṁ vañcitā māyayā dṛḍham yat tvāṁ vimuktidaṁ prāpya na mumukṣeya bandhanāt

अर्थ: देवहूति ने कहा: निश्चय ही मैं भगवान् की माया से गहराई से छली गई हूँ, इसमें कि, आपको — मुक्ति के दाता को — प्राप्त करके भी, मैंने सांसारिक बन्धन से मुक्ति नहीं माँगी। (स्कन्ध 3, अध्याय 23, श्लोक 57)



कर्म के अपने विवाह के समय सहमति के अनुसार वन-जीवन के लिए प्रस्थान की तैयारी करते समय, देवहूति, उसका हृदय पीड़ित किन्तु उसका मुख अब भी संयत, उनसे भय से रक्षा की याचना करती है तथा कोमल ईमानदारी से प्रेम की उस शक्ति पर चिन्तन करती है जो या तो बाँधती है या मुक्त करती है (श्लोक 49-57)।

इस याचना के साथ, त्रयोविंश प्रवचन अपने समापन को प्राप्त होता है — इसका अपना कोलोफोन इसे, उल्लेखनीय रूप से, भगवान् कपिल की कथा के भाग के रूप में वर्णित करता है, वह दिव्य अवतार जिनके जन्म की ओर घटनाओं का यह सम्पूर्ण क्रम शान्तिपूर्वक निर्मित हो रहा है। यहाँ देवहूति का शोक निराशा नहीं है; यह उस व्यक्ति की सच्ची पीड़ा है जिसने, अपने ही पति की शक्ति तथा कृपा के माध्यम से, अभी झलक पाई है कि और कितना कुछ सम्भव है — तथा जो अब, उनके प्रस्थान की दहलीज़ पर, उस एक उपहार की माँग करती है जो उस सम्भावना को पूर्ण होने देगा।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. बिना माँग के अर्पित भक्ति अन्ततः, तथा प्रचुरता से, उत्तर पाती है। देवहूति की वर्षों की मौन, बिना शिकायत की सेवा — इतनी मूल्यवान् कि उसने उसे दृश्यरूप से क्षीण कर दिया — वही है जो कर्म को उसकी माँग से कहीं अधिक प्रदान करने के लिए प्रेरित करती है; अध्याय यह सुझाता है कि सच्ची भक्ति में स्वयं कृपा को आकर्षित करने की शान्त शक्ति होती है (श्लोक 1-9)।

2. आध्यात्मिक निपुणता तथा सांसारिक भव्यता एक-दूसरे को भ्रष्ट करने की आवश्यकता नहीं रखतीं। अकल्पनीय सम्पदा के एक विमान तथा दिव्य परिचारिकाओं की संगति के मध्य भी, कर्दम की योगिक आत्म-निपुणता पूर्णतः अडिग रहती है — यह स्मरण कराते हुए कि संन्यास हृदय का एक गुण है, मात्र किसी की परिस्थितियों की एक स्थिति नहीं (श्लोक 12-21, 36-42)।

3. पवित्र शक्ति, उचित रूप से प्रयुक्त, प्रेम को प्रतिस्थापित करने के बजाय उसकी सेवा करती है। इस सम्पूर्ण अध्याय में कर्दम के योगिक कार्य — विमान, देवहूति का रूपान्तरण, उनके अपने रूप का गुणन — कभी भी अपने लिए प्रदर्शित नहीं किए जाते; प्रत्येक पूर्णतः उनकी पत्नी के सच्चे सुख तथा एक पवित्र वचन की पूर्ति की ओर निर्देशित है (श्लोक 22-23, 43-44)।

4. एक धन्य तथा प्रचुर जीवन भी गहरी उत्कण्ठा के लिए स्थान छोड़ता है। विमान में देवहूति का आनन्द, उसका रूपान्तरण, तथा उसकी नौ पुत्रियों का जन्म उसके हृदय की सच्ची इच्छा को समाप्त नहीं करते; अध्याय के अन्त में उसका शोक दिखाता है कि सांसारिक पूर्ति, चाहे कितनी भी वास्तविक हो, उस पूर्ति के समान नहीं है जिसे आत्मा अन्ततः खोजती है (श्लोक 49-56)।

5. प्रेम, उचित रूप से निर्देशित होने पर, मुक्ति का ही साधन बन जाता है। देवहूति का समापन चिन्तन — कि अयोग्य को दिया गया प्रेम बाँधता है जबकि सच्चे पवित्र को दिया गया वही प्रेम मुक्त करता है, तथा यह कि भगवान् के चरणों की ओर कभी न ले जाने वाला जीवन साँस के वेश में मृत्यु है — तीन निर्भीक श्लोकों में इस अध्याय की कुछ सबसे स्थायी आध्यात्मिक अन्तर्दृष्टि अर्पित करता है, तथा भक्ति पर स्वयं भगवान् कपिल की आगामी शिक्षाओं की भूमि को शान्तिपूर्वक तैयार करता है (श्लोक 55-57)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय के गति में कुछ शान्त रूप से शिक्षाप्रद है — वर्षों की अदृश्य, अचमकीली सेवा से, कहीं से भी प्रकट हुए एक अद्भुत कार्य तक, कठिनाई ने जो घिसा था उसे पुनर्स्थापित करने वाले एक रूपान्तरण तक, इतने पूर्ण साहचर्य तक कि समय स्वयं अपनी पकड़ खो देता प्रतीत होता है, तथा अन्ततः एक ऐसे शोक तक जो इस समस्त प्रचुरता के बावजूद नहीं अपितु उसके साथ ही आता है। देवहूति कभी भी अपने पति की शक्ति की मात्र निष्क्रिय प्राप्तकर्ता नहीं है; उसे सर्वत्र किसी ऐसे व्यक्ति के रूप में दिखाया जाता है जिसका अपना आन्तरिक जीवन — उसका धैर्य, उसकी स्पष्टवादिता, एक दिव्य विमान से भी परे किसी वस्तु की उसकी अन्तिम उत्कण्ठा — कथा को उतना ही आकार देती है जितना कर्दम के योगिक उपहार। तथा कर्दम स्वयं, अपनी सम्पूर्ण शक्ति के बावजूद, कभी भी कोमलता से न्यून प्रदर्शित नहीं होते; उनकी निपुणता तथा अपनी पत्नी के प्रति उनका स्नेह जान-बूझकर पूर्णतः सुसंगत दिखाए जाते हैं। अध्याय की अन्तिम टिप्पणी — देवहूति की यह ईमानदार स्वीकृति कि वह, एक अर्थ में, जो उसे दिया गया था उससे बहुत सन्तुष्ट हो गई थी — उसकी आलोचना से कम, प्रत्येक पाठक के लिए एक आमन्त्रण अधिक है: यहाँ तक कि इस संसार द्वारा प्रदान किए जा सकने वाले समृद्धतम आशीर्वाद भी, चाहे वे कितने भी पवित्र तथा कठिनाई से अर्जित क्यों न हों, हमें अभी भी आगे की किसी वस्तु की ओर संकेत करने के लिए हैं।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज, अपने ही जीवन के किसी एक सम्बन्ध पर विचार करें जो शान्त, अचमकीली सेवा से पोषित है — बिना तत्काल प्रतिफल की अपेक्षा के दी गई देखभाल। ध्यान दें, जैसा यह अध्याय दिखाता है, कि ऐसी भक्ति शायद ही कभी व्यर्थ जाती है, भले ही उसके फल धीरे-धीरे प्रकट हों। तथा देवहूति की समापन ईमानदारी पर भी विचार करें: स्वयं से पूछें कि क्या आपको पहले ही प्राप्त हुआ कोई आशीर्वाद, चाहे वह कितना भी वास्तविक तथा कठिनाई से अर्जित क्यों न हो, शान्तिपूर्वक किसी बड़ी वस्तु की ओर एक द्वार बनने के बजाय स्वयं में एक लक्ष्य बन गया है।

अपने दिन की माँगों की ओर लौटने से पूर्व, रुककर शान्तिपूर्वक दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” इस स्मरण को अपने हृदय को कोमलता से, जो आपके पास है उससे सन्तोष से उस गहरी स्वतन्त्रता की ओर मोड़ने दें जिसकी ओर प्रत्येक सच्चा आशीर्वाद अन्ततः आपको ले जाने के लिए है।

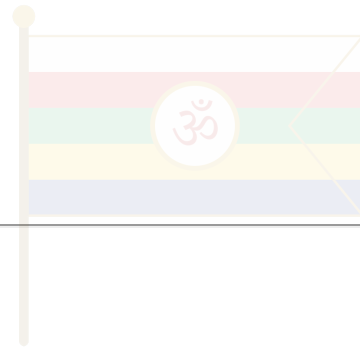
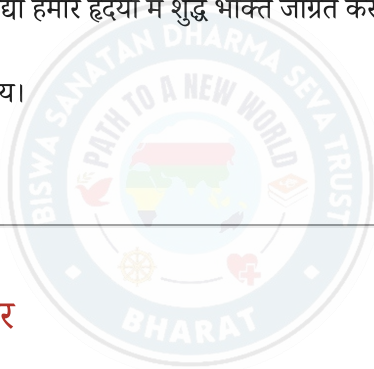
उपसंहार

तृतीय पुस्तक का त्रयोविंश प्रवचन विदुर की कथा को स्वायम्भुव मनु की महिमा से उनकी पुत्री देवहूति तथा उसके पति ऋषि कर्दम के कोमल, समृद्ध रूप से विस्तृत जीवन में ले जाता है। मैत्रेय हमें कृपा से उत्तर पाई भक्ति दिखाते हैं: वर्षों की अदृश्य सेवा अन्ततः एक ऐसे वरदान से मिली जो साधारण कल्पना से परे है — एक दिव्य विमान, एक शुद्धिकारक तथा रूपान्तरकारी स्नान, इतना पूर्ण एक साझा जीवन कि सौ वर्ष एक घण्टे के समान बीत गए, तथा नौ पुत्रियाँ जो प्रेम जितनी ही योगशक्ति से आकारित एक मिलन से जन्मीं। फिर भी अध्याय साधारण विजय में समाप्त नहीं होता; यह देवहूति के अपने ईमानदार शोक के साथ समाप्त होता है, उसकी यह पहचान कि इस प्रचुरता ने भी उसे अभी वह एक वस्तु नहीं दी है जिसकी धर्म अब भी उससे माँग करता है, तथा आगे जो भी आए उसका सामना करने के लिए साहस तथा सुरक्षा की उसकी याचना। यह एक ऐसा अध्याय है जो, जान-बूझकर, पूर्ति तथा आगे की उत्कण्ठा के मध्य निलम्बित है — चतुर्विंश प्रवचन के लिए भूमि तैयार करते हुए, जिसमें अपनी पत्नी के प्रति कर्दम का अन्तिम वचन स्वयं भगवान् कपिल के जन्म का मार्ग खोलता है।

श्रीमद्भागवत की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जाग्रत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), तृतीय पुस्तक, त्रयोविंश प्रवचन, आन्तरिक पृष्ठ 237–243।
- श्रृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust.
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें स्रोत-श्लोकों को विस्तार से उद्धृत करने के बजाय संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा भाष्य की प्रतिलिपि नहीं है। किसी भी प्रकाशक के साथ कोई सम्बद्धता अथवा समर्थन निहित नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-23-kardama-devahuti-pranay-kridayen.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

